पुस्तक परिचय

**लेखक** शारदा श्रीनिवासन
**पृष्ठ** 294 + परिचय
**भाषा** अंग्रेज़ी
**प्रकाशक** विमेन अनलिमिटेड, नई दिल्ली
**मूल्य** 595/-

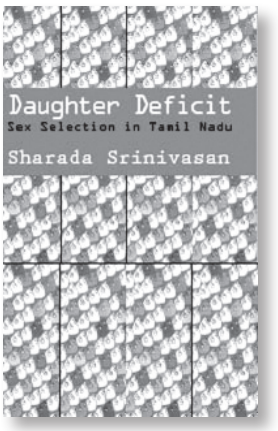


# डेफ़िसिट डॉटर्स: सेक्स सलेक्शन इन तमिलनाडु

**उत्तरी भारत** के राज्यों- पंजाब, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, दिल्ली में लिंग परीक्षण की सच्चाई से हम सब वाकिफ़ है। परन्तु इस अकादमिक दस्तावेज़ के माध्यम से शारदा श्रीनिवासन ने दक्षिण के राज्य तमिलनाडु के दहलाने वाले तथ्य उजागर किए हैं।

शारदा श्रीनिवासन यॉर्क विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर हैं। उनका मानना है कि बालिका शिशु के प्रति बेरूखी पूर भारत में विद्यमान है। तमिलनाडु में मदुरई ज़िले के उसीलमपट्टी क्षेत्र व सेलम में स्त्री भ्रूण हत्या के काफी मामले सामने आए हैं। राज्य में 0-6 वर्ष के वर्ग समूह में लड़कियों की संख्या निरन्तर गिरती जा रही है। हालांकि भारत के अन्य राज्यों की तुलना में तमिलनाडु में औरतों की स्थिति व दर्जा दोनों बेहतर पाये गये हैं फिर भी बालिका शिशु संख्या के आंकड़े 985 (सन् 1961) से गिरकर 942 (सन् 2001) पर पहुंच गये हैं।

इस राज्य में गिरते आंकड़ों वाले क्षेत्रों में अध्ययन व यात्राओं से यह सामने आया है कि स्त्री भ्रूण हत्या अनेक जाति, वर्गों व ज़िलों में प्रचलित है। यह प्रथा मुख्यतः सम्पन्न व ऊंची जाति के भूपति परिवारों में पाई गई है। मदुरई की कल्लर तथा सेलम व वेल्लोर की गूंदर जाति के साथ-साथ अन्य जाति के लोग भी स्त्री भ्रूण हत्या से जुड़े हैं।

लेखिका ने इस तथ्य की भी पुष्टि की है कि इस चलन का गरीबी और शिक्षा के अभाव से कोई लेना देना नहीं है। गर्भ में लिंग परीक्षण की चाह रखने वाले परिवार संभ्रांत और शिक्षित वर्ग से आते हैं। पंजाब जैसे राज्यों में सम्पत्ति के विभाजन को रोकने के लिए एक दम्पति एक बच्चा यानी बेटा पैदा कर रहे हैं। ठीक इसी तरह सेलम के परिवारों में अगर पहलोंठी का बच्चा बेटा हो जाए तो अन्य बच्चों पर रोक लगा दी जाती है। परन्तु अगर पहला बच्चा बेटी होने पर बेटा पैदा होने का इंतज़ार करना उचित समझा जाता है। इलाके में लड़कियों की घटती संख्या से वधुओं की कमी और अन्य जातियों के साथ विवाह संबंधों में भी वृद्धि देखी गई है।

अपनी पुस्तक में श्रीनिवासन बताती हैं कि स्त्री भ्रूण हत्या व लड़कियों की घटती चाह के पीछे मुख्य कारण है सम्पत्ति। बेटियों के उत्तराधिकार में ज़मीन-जायदाद नहीं मिलती, न ही बुढ़ापे में माता-पिता उनके साथ रहने की उम्मीद कर सकते हैं। दहेज, परिवार की इज़्ज़त का दायित्व जैसे अन्य कारण भी इस बेरुखी के लिए ज़िम्मेदार हैं।

लेखिका अपनी पुस्तक में इस बात की भी ज़ोर-शोर से वकालत करती है कि सरकारी हस्तक्षेप की मदद से इस समस्या को सम्बोधित किया जा सकता है। वे मानती हैं कि सामाजिक रवैयों में बदलाव तथा नैतिक मूल्यों के प्रति सकारात्मकता के साथ-साथ अल्पकालीन सरकारी प्रयासों की भूमिका भी अहम है।

पुस्तक में तमिलनाडु के कुछ चुनिंदा इलाकों धर्मपुरी, सेलम, थेनी, नामक्कल व मदुरई जहां पर लड़कियों की संख्या सर्वाधिक गिरी थी वहां सरकारी परियोजनाओं से हुए परिवर्तन का ब्योरा भी दिया गया है। सरकार ने यहां क्रेडल बेबी स्कीम, बालिका शिशु संरक्षण स्कीम व स्त्री शिशु भ्रूण हत्या के ख़िलाफ़ सघन कानूनी सक्रियता का कार्यान्वयन किया है। यहां पर गैर सरकारी संगठनों सरकार व नागरिक समाज समूहों के त्रिपक्षी प्रयासों के चलते 1960 के बाद पहली बार लड़कियों की तादाद में चार अंकों की बढ़त यानी 942 से 946 (सन् 2011) देखी गई है।

2011 की जनगणना के बाद लड़कियों की संख्या में गिरावट रोकने के प्रयासों को और अधिक तेज़ कर दिया गया है। उदाहरण के तौर पर ग्रामीण सेलम में स्त्री भ्रूण हत्या के आंकड़े 121 (सन् 1996-99) से घटकर 45 (सन् 2003) धर्मापुरी में 111 से 49 व थेनी में 82 से 42 रह गए हैं। स्वयंसेवी संगठनों के प्रयासों के कारण ग्रामीण इलाकों में अब अपंजीकृत परीक्षण केंद्र भी नहीं खोले जा सकते।

पुस्तक के अंत में शारदा श्रीनिवासन सरकारी व गैर सरकारी प्रयासों की सराहना करते हुए पाठक के समक्ष एक शंका भी पेश करती हैं। क्या सरकार व स्वयंसेवी संगठनों के प्रयास और दिलचस्पी में कमी स्त्री संरक्षण के प्रयासों को बरकरार रख सकेगी? क्या बेटियों को दोबारा जीने के हक़ से वंचित होना पड़ेगा? लिहाज़ा सरकारी नीतियों के अलावा सामाजिक मूल्यों रवैयों और व्यवहारों में मूलभूत परिवर्तन ही आने वाले समय में निर्णायक भूमिका अदा कर सकता है।

***–जुही जैन***

फ़िल्म समीक्षा

**फ़िल्म** : अपराजिता

**निर्देशक** : रमन कुमार

**भाषा** : हिन्दी

**अवधि** : 60 मिनट

**स्वैच्छिक स्वास्थ्य** संगठन वीहाई (वालेंटरी हैल्थ असोसियेशन ऑफ़ इण्डिया) तथा स्मिता प्रोजेक्ट प्रस्तुतिकरण के सहयोग से निर्मित यह वृत्तचित्र एक युवा किशोरी अपराजिता के संघर्षों और प्रयासों का चित्रण है। इस फ़िल्म में उसकी कठिनाइयों, उससे बाहर निकलने की कोशिश तथा असल पहचान के लिए आगे बढ़ने के पहलुओं पर भी नज़र डाली गई है।

कहानी की शुरूआत एक किशोरी अपराजिता और उसकी मां के बीच बातचीत से होती है जिसमें किशोरी अपनी पसंद के कपड़े पहनने के लिए प्यार से गुज़ारिश कर रही है। परन्तु मां दादा व पिता की पसंद को आगे रखते हुए उसे ऐसा करने से मना करती है। अपने तर्क को आगे रखते हुए अपराजिता कहती है कि आज उसका सोलहवां जन्मदिन है व इस मौके पर उसका हक़ बनता है कि वह अपनी पसंद के कपड़े यानी पैंट पहन सके। बेटी की बात सुनकर मां उसे अपने मन की करने के लिए रज़ामंदी दे देती है।

अगले दृश्य में अपराजिता के घर उसके जन्मदिन की पार्टी हो रही है। अपराजिता दादाजी को केक खिलाने आती है परन्तु दादाजी नाखुश हैं। पार्टी का शोर-शराबा उन्हें पसंद नहीं है। वह अपने बेटे को बुलाकर डांट लगाते हैं जिसे सुनकर बेटा पार्टी खत्म होने का ऐलान कर देता है।

अगले दिन अपराजिता बास्केट बॉल की प्रतियोगिता में शामिल होने के लिए घर में अभ्यास कर रही है ताकि वह स्कूल में होने वाले मैच में शामिल हो सके। परन्तु दादाजी गुस्सा होकर कहते हैं कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए और स्कूल के बाद सीधे घर आकर काम काज सीखना चाहिए। फ़िल्म के मध्यान्तर तक अपराजिता के लिए दादाजी की तरफ से हिदायतें ही होती हैं जिनमें ख़ासतौर पर लड़कियों को चूल्हा-चौका संभालने व घर के अन्य कार्यों में सहयोग देने के लिए तैयार होने के संदेश दिए जाते हैं।

फ़िल्म के अगले भाग में अपराजिता के पिता की नौकरी छूट जाती है। पर पिता चाहते हैं कि बच्चों की पढ़ाई-लिखाई जारी रहे। इसके लिए वे अपनी जमा-पूंजी इस्तेमाल करना चाहते हैं। पर दादाजी को

यह गवारा नहीं है। वे आदेश देते हैं कि लड़की की पढ़ाई बंद कर दी जाए और जमा की हुई रकम उसकी शादी के लिए सुरक्षित रखी जाए।

यह जानकर अपराजिता के सारे सपने टूटकर बिखर जाते हैं। उच्च शिक्षा और मौज-मस्ती की जगह रोक-टोक, पाबंदियां और मनाहियां ले लेती हैं। नाउम्मीदी और उदासी उसे घेर लेती है।

अपराजिता की बुआ महिला कॉलेज में कला शिक्षिका है। उनका आना अपराजिता में जीवन में एक बार फिर उम्मीद की किरण लेकर आता। वह अपनी भतीजी को समझाती है कि वह मायूस न हो। वह अपने हाथ में ब्रश थामकर अपने जीवन में रंग भर सकती है। चित्रकारी के शौक के ज़रिए वह एक आत्म-सम्मान से भरी खुशहाल ज़िंदगी बसर कर सकती है। बुआ के इन प्रगतिशील विचारों और खुली सोच से अपराजिता को हौसला और हिम्मत मिलती है। वह ठान लेती है कि वह ज़िंदगी में कुछ करके साबित कर देगी कि लड़कियां किसी से कम नहीं होतीं।

बुआ दादाजी से अपराजिता को अपने साथ ले जाने की अनुमति ले लेती है। बुआ के यहां अपराजिता की मुलाकात अन्य लोगों से होती है। छः महीने के उपरांत दादाजी अपराजिता को वापस बुलाने के लिए कहते हैं। माता-पिता उसे लेने के लिए बुआ के घर जाते हैं।

अपराजिता अपने माता-पिता के साथ वापस जाने से इंकार कर देती है। उसके साथी, सहयोगी शिक्षक और बुआ उसके मां-बाप को समझाते हैं कि अपराजिता पर कोई दबाव न डालें। अपराजिता अपना निर्णय अपनी मां को बताती है— वो घर वापस नहीं आना चाहती बल्कि यहां रहकर अपनी डॉक्टरी की पढ़ाई करना चाहती है। मां मान जाती है और अपने पति को टाल मटोल करके घर वापस जाने को कहती है। इस बात को किशोरी के पिता भी समझ जाते हैं। अपनी पत्नी के निर्णय का साथ देते हुए वह घर वापस चले जाते हैं।

यह सब जानकर दादाजी बहुत दुःखी होते हैं। कुछ समय बाद दादाजी को दिल का दौरा पड़ जाता है। अब डॉक्टर बन चुकी अपराजिता दादाजी की खूब देखभाल करती है। होश आने पर जब दादाजी को यह पता चलता है कि आज वे अपराजिता के कारण ही ज़िंदा है तो वह अपने किए पर बेहद शर्मिंदा होते हैं और पोती से माफ़ी मांगते हैं। उसे आगे बढ़ने का आशीर्वाद देते हुए दादाजी अपनी गलती मान लेते हैं।

अपराजिता एक ऐसी युवा लड़की के संघर्ष की कहानी है जिसका दृढ़ संकल्प, लगन और साहस उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। इस वृत्तचित्र में निर्देशक ने समाज में व्याप्त गैर बराबरी, भेदभाव और पितृसत्तात्मक मानदण्डों का बखूबी चित्रण किया है। समाज में लड़कियों के साथ होने वाली नाइंसाफ़ी, परिवार में उनका दोयम दर्जा तथा कदम-कदम पर उनके साथ होने वाले अन्याय को फ़िल्म में बड़े ही सहज तरीके से दर्शाया गया है।

फिल्म में यह भी स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है कि अगर मन में कुछ कर गुज़रने और आगे बढ़ने की चाह हो, परिवार व समाज के कुछ लोगों का सहयोग मिल जाए तो मंज़िल दूर नहीं। अगर लड़कियों को लड़कों की तरह मौके, हौसला और सहयोग मिले तो वे भी बेटों की तरह अपना नाम रोशन कर सकती हैं।

यह फ़िल्म युवाओं के साथ कार्यशालाओं में उपयोगी प्रशिक्षण सामग्री हो सकती है। आम जीवन की हक़ीक़तों से बुनी यह कहानी आत्म-मंथन और चर्चाओं को सघन बनाने में भी मददगार रहेगी।

***सरिता बलोनी*** *जागोरी में कार्यरत हैं।*

**मेरे घर के पास के**
**पार्क में लाइट है नहीं**
बस्ती के दारू और जुए वाले अंकल,
सब खेलते हैं वहीं।
जिस दिन पार्क में ट्यूबलाईट लगेगा,
अंधेरा फिर उन्हें आसरा न देगा।
पार्क फिर डरावना ना होगा कभी,
तब जाएंगे खेलने हम सभी।

एक दिन चंचल
झट उठकर बोली
**पार्क में क्यों खेलती है**
**सिर्फ लड़कों की टोली?**
हम लड़कियां वहां खेलने हर रोज़ जाती ही नहीं।
शायद इसलिए, खेलने की जगह वहां पाती ही नहीं।
कल लड़कियों की टीम बनाकर जाऊंगी दिन में वहीं।
क्रिकेट खेलना नहीं आता
तो गुल्ली-डण्डा ही सही।

फुटबॉल और क्रिकेट
लड़कियों के लिए नहीं।
**मां कहती है मेरे लिए**
**घर ही है सही**
वो क्या जाने की जब मैं स्कूल जाती हूं,
लड़कों को सभी खेलों में हराती हूं।

स्कूल हो आई
टैन्कर से पानी भर लाई
बना ली दोपहर की रोटी
सजा दी छुटकी की चोटी
कर दी घर की सफ़ाई, साथ चूल्हे की लिपाई
मुन्नो को खाना खिलाया,
फिर अम्मा का सिर दबाया,
अब घर में किसी को कुछ चाहिए नहीं
अब मिला है मौका सही...
**अब मेरा खेलने का टाईम है!**

हर दिन मम्मी मुझे,
पार्क में खेलने से रोके।
उठाकर कोई ले जाएगा, कहकर वो टोके।
चुपचाप मैं सब कुछ सहती,
वो ऐसा कभी भाई को नहीं कहती।
**लड़कों को कोई नहीं उठाता है क्या?**
ऐसा सवाल जब मेरे जुबान पर जगे।
तब थप्पड़ मुझे मार कर वो बोली,
तेरे मुंह में कीड़े पड़ें।

अभी तू छोटी है **बाहर मत जा**
अभी तू बड़ी हो गई है
**बाहर मत जा**
किसी की नज़र लग जाएगी
**बाहर मत जा**
अरी अम्मा, लड़ाऊंगी नज़र, तभी तो उतरेगी नज़र।
कोई ज़न्नत नहीं यहां अन्दर। क्या रद्द होगा अगर
जाऊंगी बाहर? बाहर आसमान से मेल करूंगी,
संसार के संग खेल करूंगी,
बाहर तो मैं अब जाकर रहूंगी

मां, जब भी बाज़ार जाती हूं,
चुपचाप होती हूं परेशान।
चलती है मर्दों की अज़ीब हरकत,
चलती है गंदी ज़ुबान।
मां बोली, जब तू बाज़ार जाएगी
तेरा भाई तेरे साथ जाएगा।
अरे मां, मैं 17 की, वो 8 साल का,
वो मुझे इन सबसे क्या बचाएगा?
**खुद इन हरकतों का सामना**
करने की आ गई है बारी।
कुछ कदम भर सामना मैं करूंगी
तो संग जुड़ेगी दुनिया सारी।

बिटिया ले, तेरे लिए खिलौने,
छोटे-छोटे बर्तन और नन्हें भगौने।
बिटिया ले, ये गुड़िया तेरे लिए,
इसके बाल सजा और पहना कपड़े इसे।
**अम्मा, रखो अपनी सुन्दर सी गुड़िया,**
**मुझे लगता है बाहर, खेलना-कूदना बढ़िया।**
रखिए, अपने ये खिलौने सारे,
मुझे दो बैट-बॉल,
और भैया की छोटी कारें।

सारे दिन मां जाती है,
मज़दूरी या काम पर।
बंद कर जाती है मुझे,
हमारे घर के भीतर।
एक दिन ऐसा आएगा,
मां का बटुआ पैसों से भर जाएगा।
**फिर किसी भी झिझक के बिन,**
**धूप में खेलूंगी सारे दिन!**

अम्मा के ज़माने में कहते थे,
लड़की करेगी शादी, बनाएगी घर पर रोटी।
लड़का खोजेगा मज़दूरी-चाकरी,
और लाएगा घर पर रकम मोटी।
पर हम सबके पापा-लोग,
ऐसी कोई रकम तो ना लाए।
अम्माओं ने घरों के बर्तन धोकर, हमारे खर्चे चलाए।
**अब टाईम आ गया है, हम लड़कियों को**
**पढ़कर कमाने का, और टाइम आ गया है,**
**भैया को रोटी बनाना सिखाने का।**

यह जानकारी जागोरी की यूथ बुकलेट 'मैं भी खेलूंगी' से ली गई है।

# cfV ;k mBh ugh rk

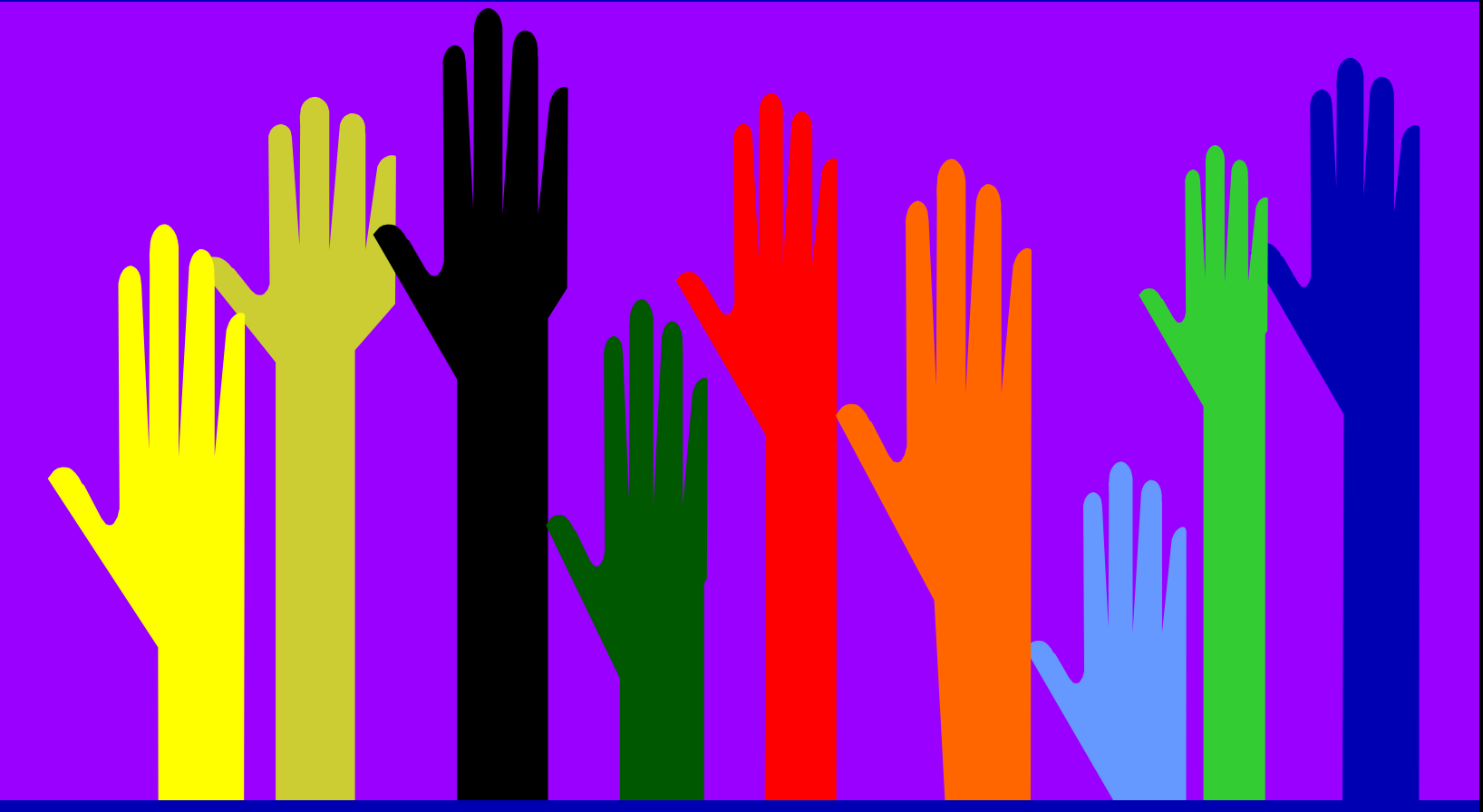



# tYe c<r tk;x

Jagori Rural

Sangat

A South Asian Feminist Network

fM tkbu% lkHkkj vugn • lxr] tkxjh] tkxjh xkeh.k] jDdj fl/kckMh] dkxMk ftyk] fgekpy in'k&176057